Advanced International Journal for Research (AIJFR)
E-ISSN: 3048-7641 ● Website: www.aijfr.com ● Email: editor@aijfr.com

मौर्य एवं शुंग काल में मूर्तिकला और वास्तुकला का योगदान

वर्षा जैन
शोधार्थी
जैन अध्ययन केंद्र
तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद उत्तरप्रदेश

डॉ रत्नेश कुमार जैन,
शोध निर्देशक
जैन अध्ययन केंद्र
तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद उत्तरप्रदेश

जैन परम्परा जैनधर्म को अनादि-अनन्त मानती है । मौर्य एवं शुंग काल में जैन मूर्तिकला का विकास (ई.पू.317 से ई.पू.184) हुआ । मौर्य साम्राज्य की मूर्तियाँ ,कला के उन रूपों को प्रदर्शित करती हैं जो इस अवधि के दौरान तैयार किए गए थे । मौर्य साम्राज्य कला, संस्कृति, वास्तुकला और साहित्य में अपनी महान उपलब्धियों के लिए पहचाना जाता है । मौर्य साम्राज्य अपने शासनकाल के दौरान निर्मित, लकड़ी और पत्थरों के उपयोग से भारतीय कला में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है । इसे अशोक जैसे मौर्य राजाओं द्वारा संरक्षित शाही कला के रूप में वर्णित किया गया है ।

जैन साहित्य के अनुसार, मौर्य राजाओं में अशोक, कुणिक, सम्प्रति और दशरथ जैन धर्मानुयायी राजा थे। जब भद्रबाहु कर्नाटक पहुँचे उनके समक्ष चन्द्रगुप्त ने जिनदीक्षा ग्रहण की, आज भी वह पहाड़ी 'चन्द्रगिरि' के नाम से जानी जाती है। प्रथमतः दक्षिण में जैनधर्म का उद्यभव,प्रचार,प्रसार इसी समय हुआ । सम्प्रति जो की अशोक के पौत्र थे उनको 'परम अर्हत्' कहा गया है। सम्प्रति द्वारा अनेक जैन मन्दिरों का निर्माण कराया । इन साहित्य प्रमाणों के अलावा पुरातात्विक प्रमाण के तौर पर दिगंबर प्रतिमा (लोहानीपुर-पटना), से प्राप्त मस्तक विहीन कायोत्सर्ग मुद्रा में नग्न मूर्ति को मौर्य काल की माना जा सकता है। मौर्य काल में मूर्तियों का निर्माण चिपकवा विधि (अंगुलियाँ या चुटकियों का इस्तेमाल करके) या सांचे में ढालकर किया जाता था । पारखम (उत्तर प्रदेश) से प्राप्त 7 फीट ऊँची यक्ष की मूर्ति, धौली (ओडिशा) का हाथी तथा दीदारगंज (पटना) से प्राप्त यक्षिणी मूर्ति मौर्य कला के उदाहरण हैं । इस पर स्पष्ट आलेख है ,जो उसे लगभग तृतीय शती ई.पू. की सिद्ध करती है । पटना संग्रहालय में यह सुरक्षित है। इस मूर्ति की बनावट और शरीर रचना का संतुलन उसे परमयोगी की मूर्ति के रूप में पहचान दिलाती है , यहीं एक और धड़ जिन प्रतिमा का मिला है। तीर्थंकर की मूर्तियों पर इस काल में सामान्यतः चिन्ह नहीं उकेरे जाते थे बल्कि पादपीठ में लिखे हुए शिलालेख से उनकी पहचान होती थी ।

दिगंबर प्रतिमा (लोहानीपुर-पटना),
(जैना लायब्रेरी)

दिगंबर प्रतिमा (लोहानीपुर-पटना),
(जैना लायब्रेरी)

वक्षस्थल पर श्रीवत्स तथा हथेलियों या तलवों पर धर्मचक्र अथवा उष्णीस के चिन्ह अवश्य होते थे। ऋषभदेव के सिर पर जटाजूट, सुपार्शवनाथ के सिर पर पाँच फण तथा पार्श्वनाथ की मूर्ति पर सप्तफण भी बनाए जाते थे, ये विशेषतायें शुंगकाल में अधिक विकसित हुईं। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि वसुदेव हिण्डी (ल. पाँचवी शताब्दी, भाग 1, पृ.71) तथा आवश्यकचूर्णि (७वी शताब्दी, गाथा 774)में महावीर के जीवनकाल में निर्मित "जीवन्त स्वामी" की चन्दन काष्ठ मूर्ति का उल्लेख अवश्य आता है । अकोटा से अवश्य गुप्तकालीन दो कांस्य मूर्तियाँ मिली हैं ।

अकोटा कांस्य मूर्तियाँ

ऐसी ही परम्परा का उल्लेख बौद्ध ग्रन्थों में भी बाद में आया है। वहाँ कहा गया है कि प्रसेनजित ने बुद्ध की गोशीर्ष चंदन की प्रतिमा बनवाई थी,जो जेतवन बिहार में बहुत दिन तक रही । ऐसा लगता है, जिन मूर्तियाँ प्राचीन यक्ष- **मूर्तियों** के आदर्श पर निर्मित हुई और प्राचीन यक्ष-नाग सम्प्रदाय की पूजा-पद्धति को प्रभावित किया। शुंगकाल वैदिक धर्म का अतीतकाल कहा जा सकता है। कलिंग नरेश खारवेल ने मगध पर आक्रमण कर ऋषभदेव की प्रतिमा को वापिस प्राप्त किया था। चमकदार पॉलिश, **मूर्तियों** की सजीव भाव अभिव्यक्ति, एकाश्म पत्थर द्वारा निर्मित पाषाण स्तंभ एवं उनके कलात्मक शिखर पत्थरों पर पॉलिश करने की कला, इस काल में इस स्तर पर पहुँच गई थी ।

मौर्य कला चमकदार दर्पण जैसी पॉलिश के साथ-साथ अपनी रचनाओं की विशाल विविधता के लिए उल्लेखनीय है। यह कला पत्थर के खंभों, रेलिंगों, छतरियों, पशु और मानव **मूर्तियों** के अलावा कई अन्य रूपांकनों में भी दिखाई देती है । मौर्यकालीन स्तंभ दुनिया के अन्य स्तंभों से बहुत अलग हैं। मौर्य साम्राज्य के कई हिस्सों में पत्थर के स्तंभ बनाए गए थे । सारनाथ में पाया गया मौर्य स्तंभ का शीर्ष, जिसे व्यापक रूप से सिंह स्तंभ के रूप में जाना जाता है , मौर्य परंपरा को प्रदर्शित करने वाली मूर्तिकला का सबसे अच्छा उदाहरण है।

मूर्तिकला के साथ गुफा**यों** और वास्तुकला का भी संबंध जुड़ा है। अशोक द्वारा आजीविक सम्प्रदाय को भेंट किये गए प्राचीनतम तीन गुफा समूह गया, बाराबर और नागार्जुनी पहाड़ियों के पास प्राप्त हुए हैं ,जिसकी विरासत उसे ई.पू.तृतीय शताब्दी की सिद्ध करती है। वास्तविक रूप में प्राचीनतम गुफा**यों** के रूप में हम उदयगिरि और खंडगिरि गुफा**यों** का उल्लेख कर सकते हैं। कलिंग ने अपने राज्य के तेरहवे वर्ष मे इन पहाडि**यों** पर जैन गुफायें, स्तूप, विहार और मन्दिरों का निर्माण कराया। हाथी गुफा शिलालेख में यह सब विस्तार से वर्णित है। इन गुफा**यों** को विहार के रूप में विकसित किया गया। ये गुफायें प्रायः दो मंजिलों की हैं। कोठरियाँ और बरामदे भी हैं। बिना स्तम्भ और बरामदें वाली गुफाये छोटी और अलंकृत हैं तथा स्तम्भयुक्त बरामदे वाली गुफायें बड़ी और अलंकृत हैं। इनमें रानी गुफा का शिल्प अधिक अलंकृत है।

उदयगिरि रानी गुफा (जैना लायब्रेरी)

शिल्पांकित तोरण शासन देवियाँ, आयुध, वाहन और द्वारपाल भी अंकित हुए हैं। कलिंग जिन मूर्ति संभवतः इसी में स्थापित रही होगी।शासन देवियों का अनुरेखन यहाँ पहली बार हुआ हैं। यह इसकी विशेषता है। जूनागढ़ (गिरनार) में लगभग बीस शैल कला की गुफायें हैं जो बाबा प्यारा मठ की गुफायें कहलाती हैं ये तीन पंक्तियों में बनी हैं। इनमें मंगल कलश, स्वस्तिक, श्रीवत्स, भद्रासन, मीनयुगल आदि चिन्ह मिलते हैं। इसका काल लगभग ई.पू.द्वितीय शताब्दी है। कालकाचार्य का सम्बन्ध भी गुजरात से इसी काल में रहा है। राजगृह के समीप सोनभण्डार नाम का एक जैन गुफा समूह है । इसका विशेष सम्बन्ध **दिगंबर** सम्प्रदाय से है। प्राप्त लेख के अनुसार ये गुफायें वैरदेवमुनि ने जैन साधुओं के आवास की दृष्टि से बनवाई। इसमें तीर्थंकर मूर्तियाँ भी स्थापित की गईं। विदिशा की उदयगिरि जैन गुफायें भी उल्लेखनीय हैं जिनका समय ई.पू. माना जाता है। इसी काल में दक्षिणापथ में भी तमिलनाडु में प्राकृतिक जैन गुफा**यों** की संख्या अधिक है। गुफा**यों** के भीतर शिलाओं को काटकर शय्यायें बनायी गईं और तकिये भी उठा दिये। ये ई.पू.द्वितीय शताब्दी की गुफायें है। मदुरै, रामनाथनुरम, तिरुच्चरप्पल्लि, कोयम्बतूर, अर्काट आदि जिलों में गुफा**यों** की संख्या बहुत अधिक है। सित्तन्नवासल नामक स्थान पर प्राप्त गुफा भी उल्लेखनीय है।

मौर्य युग की बेहतरीन संरचनाएं, स्तूप एवं चैत्य बौद्ध और जैन मठ परिसर का हिस्सा, स्तूप, चैत्य और विहार हैं। तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में राजस्थान के बैराट में एक स्तूप की संरचना सबसे अच्छे उदाहरणों में से एक है। सांची का महान स्तूप प्रारंभ में मौर्य युग में उपलब्ध ईंटों से बनाया गया था, और बाद में इसमें पत्थर लगाए गए, और कई नए निर्माण किए गए। देश में बौद्ध धर्म की लोकप्रियता को दर्शाने वाले कई स्तूप देखे जा सकते हैं।

चैत्य की बात करें तो यह एक आयताकार प्रार्थना कक्ष था जिसके मध्य में एक स्तूप रखा हुआ था। स्तूप को केंद्र में रखने का उद्देश्य प्रार्थना करना था, और दूसरी ओर, विहार का उपयोग भिक्षुओं के निवास के रूप में किया जाता था।

सांची का महान स्तूप

निष्कर्ष

प्राचीन भारत के ऐतिहासिक विकास में मौर्य कला एवं वास्तुकला की महत्वपूर्ण भूमिका है। चूंकि साम्राज्य एक विशाल क्षेत्र तक फैला हुआ था, इसलिए मौर्य साम्राज्य की कला ने लंबी दूरी तय की और बड़ी पहचान हासिल की।

मौर्य युग की मूर्तियाँ भारत देश में मौजूद सबसे बेहतरीन कला मानी जाती हैं। यह शाही कला है जिसे मौर्य सम्राट अशोक ने संरक्षण दिया था। मौर्य कला में स्तंभ, स्तूप, चैत्य, रॉक-कट गुफा वास्तुकला और बहुत कुछ शामिल हैं । मौर्य साम्राज्य का शासन कला और वास्तुकला के क्षेत्र में पदोन्नति की अवधि के लिए माना जाता है

संदर्भ ग्रंथ सूची ;-

1. जैन मुर्ति शिल्प---.रिसर्च इंडिया प्रेस नई दिल्ली
2. जैन मूर्तियोँ कला काउद्भव और विकास-- डॉ ब्रजेश रावत बी.आर.पब्लिशिंग कोर्पोरेशन दिल्ली
3. https://www.researchgate.net/publication/322639115_Development_of_Jain_Architecture_from_Caves_to_Temple_Architecture_
4. अमित कुमार. (2018), जैन मंदिर परम्परा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं उनकी विशषेताएँ, परिपेक्ष - इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च. 7(2), 49-50.

5. http://rcscollegemanjhaul.org/rcs/assets/uploads/assignment/assignment-1594299599-sms.pdf
6. https://prepp.in/news/e-492-mauryan-sculpture-art-and-culture-notes
7. https://prepp.in/news/e-492-mauryan-art-and-architecture-art-and-culture-notes